टंकारा में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय महर्षि दयानन्द द्विजन्मशताब्दी समारोह में सम्मिलित महाराष्ट्र के मुनिजन, सभा के पदाधिकारी एवं आर्य कार्यकर्ता।

दौड प्रतियोगिता में यशस्वी ब्रह्मचारी काशिनाथ को पुरस्कार प्रदान करते हुए सभा के उपप्रधान प्रमोदकुमारजी तिवारी, आर्य समाज परली के प्रधान श्री लोहिया एवं अन्य पदाधिकारी।

सोलापुर आर्य समाज के नवनिर्वाचित पदाधिकारी गण।

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा का
मासिक मुखपत्र

वैदिक गर्जना

सृष्टि सम्वत् १,९६,०८,५३,१२५ कलि संवत् ५१२५ विक्रम संवत् २०८१
दयानन्दाब्द २०० चैत्र/वैशाख अप्रैल/मई २०२४

प्रधान सम्पादक	मार्गदर्शक सम्पादक	सम्पादक
राजेन्द्र दिवे	डॉ.ब्रह्ममुनि	डॉ.नयनकुमार आचार्य
(९८२२३६५२७२)		(९४२०३३०१७८)

सहसम्पादक: प्रा.ओमप्रकाश होलीकर, ज्ञानकुमार आर्य, राजवीर शास्त्री, डॉ.अरुण चव्हाण

लेख/समाचार भेजने हेतु – ई-मेल : nayankumaracharya222@gmail.com

अनुक्रम

हिन्दी विभाग

१) श्रुतिसुगन्ध ०४
२) आर्य समाज के स्वर्णिम १५० वर्ष..! (सम्पादकीयम्)... ०५
३) भारतवर्ष के गौरव – मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम....... ०७
४) आर्य समाज : गौरव और गिरावट १०
५) शोक समाचार १६

मराठी विभाग

१) उपनिषद संदेश/दयानंद वाणी १७
२) महर्षी दयानंद – ऐतिहासिक पुणे प्रवचन! १८
३) त्रिवार जय-जयकार श्रीरामा! २६
४) वार्ताविशेष २९
५) शोकवार्ता ३०

✲ प्रकाशक ✲
मन्त्री, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा,
सम्पर्क कार्यालय–आर्य समाज,
परली–वैजनाथ–४३१५१५

✲ मुद्रक ✲
वैदिक प्रिन्टर्स
महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा
आर्य समाज, परली–वै.

वैदिक गर्जना के शुल्क
वार्षिक रू.१००/-
आजीवन रू.१०००/-

इस मासिक पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा विचारों से सम्पादक मण्डल सहमत हो, यह अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवादकी परिस्थिति में न्यायक्षेत्र परली–वैजनाथ जि.बीड ही होगा।

श्रुतिसुगन्ध

सब कर्मों का साधक-मन!

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्नऽऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।

(यजुर्वेद-३४/३)

पदार्थान्वय- हे जगदीश्वर वा परमयोगिन् विद्वन्! आपके जताने से (**यत्**) जो (**प्रज्ञानम्**) विशेषकर ज्ञान का उत्पादक बुद्धिरुप (**उत**) और भी (**चेतः**) स्मृति का साधन (**धृतिः**) धैर्यस्वरुप (**यत् च**) और जो लज्जादि कर्मों का हेतु (**प्रजासु**) मनुष्यों के (**अन्तः**) अन्तःकरण में आत्मा का साथी होने से (**अमृतम्**) नाशरहित(**ज्योतिः**) प्रकाशकरुप (**यस्मात्**) जिससे (**ऋते**) विना (**किम्, चन**) कोई भी (**कर्म**) काम (**न, क्रियते**) नहीं किया जाता। (**तत्**) वह (**मे**) मुझ जीवात्मा का (**मनः**) सब कर्मों का साधनरुप मन (**शिवसंकल्पम्**) कल्याणकारी परमात्मा में इच्छा रखनेवाला (**अस्तु**) हो।

भावार्थ- हे मनुष्यों! जो अन्तःकरण, बुद्धि, चित्त और अहंकाररुप वृत्तिवाला होने से चार प्रकार से भीतर प्रकाश करनेवाला, प्राणियों के सब कर्मों का साधक अविनाशी मन है, उसको न्याय और सत्य आचरण में प्रवृत्त कर पक्षपात, अन्याय और अधर्माचरण से तुम लोग निवृत्त करो।

(म.दयानन्द कृत यजुर्वेद भाष्य से साभार)

।।ओ३म्।।

वैदिक संस्कृति के सम्पोषक, समग्र विश्व के आदर्श,
हर एक मानव के मानसमण्डल पर विराजमान

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

के जन्म दिवस(रामनवमी) पर
सभी देशवासियों को हार्दिक शुभकामनाएं..!

आर्य समाज के स्वर्णिम १५० वर्ष

व्यक्ति हो या संस्था...यदि उसका अतीत काल सर्वदृष्टि से समुज्ज्वल हो, तो उसके भविष्य को लेकर किसी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं ! दुर्भाग्य से संप्रति आर्य समाज में जो कुछ निराशा नजर आ रही है, उसका मूलभूत कारण कोई बाहर नहीं, बल्कि हमारे ही अंदर है । इसे दूर कर यदि हम अपनी शक्ति व सामर्थ्य को पहचान लेंगें, तो निश्चय ही पुन: एक बार आर्य समाज का कायाकल्प होकर वह आनेवाले युग की पुकार बनेगा। ऐसा कौन सा क्षेत्र है, जहां महर्षि दयानंद के शिष्यों एवं आर्य समाज ने क्रांतिकारी कार्य न किया हो? महर्षि का २०० बर्षों का वह प्रेरणादायक स्वर्णिम इतिहास एवं आर्य समाज के १५० बर्षों का ऐतिहासिक कालखण्ड इन दोनों को जब हम अपने सामने रखते हैं, तो निश्चय ही हम निराशा व निरुत्साह के घोर अन्धःकार से बाहर आ सकते हैं। इसके लिए आवश्यकता है, व्यक्तिगत एवं सामाजिक दृष्टि से आत्मपरीक्षण की!

महर्षि दयानन्द यह एक ऐसा क्रांतिकारी महानतम व्यक्तित्व तथा उनके द्वारा संस्थापित आर्य समाज यह विश्व कल्याणकारी महान संगठन! पिता एवं पुत्र की भांति ये दोनों एक के पीछे एक चल रहे हैं। परिस्थितियां चाहे कितनी भी नजर आती हो, लेकिन इन दोनों का सुयश यावच्चन्द्रदिवाकरौ से चिरकाल तक अजरामर रहेगा। महर्षि दयानंद के २०० वी जन्मजयंती का एक स्वर्णिम वर्ष अभी समाप्त हुआ ही नहीं, तभी आर्य समाज के सार्ध शताब्दी महोत्सव की शुरुआत हुई। यह दोनों ही वर्ष हमारे लिए इसलिए ऐतिहासिक सिद्ध होते हैं कि आज के वैज्ञानिक युग में इसकी प्रासंगिकता को सिद्ध करना हमारे लिए आसान होता है। पहले की अपेक्षा आज हमें सब प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध है। वैदिक धर्म के प्रसार की दृष्टि से हमारे लिए सभी साधन भी विद्यमान है। कठिनता बस केवल इसी में है कि हम अनुयायियों की आचरणात्मक कमजोरी एवं सिद्धान्तपालन की निर्बलता! आज के तकनीकी युग में हम सभी प्रकार के भौतिक परिवर्तनों को आसानी से स्वीकार करने में तत्पर हैं, लेकिन धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक परिवर्तन के लिए हम आर्यजन कदापि तैयार नहीं है। यही

हमारी निर्बलता आर्य समाज की शिथिलता का कारण बन चुकी है। आर्य समाज यह सर्वव्यापी समग्र सुधारवादी संगठन कांग्रेस, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, तथा अन्य संगठनों से भी पुराना संगठन है। इससे पूर्व के ब्राह्म समाज, सत्यशोधक समाज, प्रार्थना समाज एवं अन्य तत्कालिन संगठन लुप्तप्राय हो चुके हैं। लेकिन आर्य समाज आज भी जीवित है। विचारों-सिद्धांतों एवं कार्य पद्धति की दृष्टि से भी आर्य समाज सबसे ऊंचा है। इसके सामने ये सभी तो साधारण से प्रतीत होते हैं । बल्कि इसी आर्य समाज के पवित्र सान्निध्य के कारण नेताओं एवं कार्यकर्ताओं का निर्माण कार्य हुआ इतना ही नहीं, इन संगठनों को आगे बढ़ने में आर्य समाज से ही तो प्रेरणा मिल चुकी है।

एक समय ऐसा था, जब आर्य समाज के विद्वान हो या साधारणसा कार्यकर्ता वह सब पर अपने आचार-विचारों से भारी पडता था। समाज में उसकी एक निराली छाप रहती थी। निरन्तर स्वाध्याय, चिन्तन, सिद्धान्तों का पालन एवं अपनी वेदानुगामिता के कारण आर्य समाजी व्यक्ति की सब जगह प्रतिष्ठा थी,जो आज प्रायः नष्ट हो चुकी है। इसे ही आज हमें जगाना होगा। इसके लिए हमें निम्न बातों पर ध्यान देना होगा -

* आर्य समाज के मूलभूत उद्देश्य 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के अनुसार हमें अपने साथ अन्य सभी को आर्य बनाना हमारा कर्तव्य है।

* आर्य समाज का अस्तित्व स्वतंत्र होना चाहिए, न कि किसी सांप्रदायिक संगठन या जातिसमूह से इसे जोडना।

* सभी आर्य समाजों एवं प्रांतीय सभाओं को मजबूत किया जाए!

* विद्वानों, उपदेशकों, पुरोहितों, प्रचारकों के निर्माण के लिए प्रयत्न करना। इन सभी की वेदाचारयुक्त पहचान हो।

* आर्य समाज के माध्यम से स्कूल एवं कॉलेज में संस्कार शिविरों व व्याख्यानों का आयोजन होवे।

* प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से आधिकारिक प्रचार हो! इसके लिए आर्य पत्रकारों एवं आर्य लेखकों का निर्माण होवे। सभी अखबारों में साप्ताहिक स्तंभ लेखन होने चाहिए। आकाशवाणी व दूरदर्शन माध्यमों का उपयोग किया जाए।

* आर्य समाज यह किसी सांप्रदाय विशेष का नहीं, बल्कि यह तो सभी के लिए है! इसलिए नानाविध संकीर्णताओं व भेदभावपूर्ण व्यवहार से ऊपर उठकर मनुर्भव का वेदसंदेश सबको सुनाने हेतु प्रयत्न होने चाहिए!

भारत वर्ष के गौरव - मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम

- डॉ. सौ. मञ्जुलता व. विद्यार्थी
(पूर्व प्रधान, आर्यसमाज अकोला)

श्रीराम एक ऐतिहासिक महापुरुष हैं। वे हमारे राष्ट्र पुरुष हैं। वे हमारे पूर्वज थे, वे युग-नायक थे। उन्होंने ऋषियों की योजनानुसार अपने समय के तरुण वीरोंको राष्ट्र-कार्य में लगाया, जनता को तैयार किया। जन-जन में बैठे हुए रावण साम्राज्य के भय को दूर करके उन्होंने सांस्कृतिक 'आर्य साम्राज्य' की स्थापना की थी।

ऐसे क्रान्तदर्शी राष्ट्रपुरुष को धर्मांधता की आड़ में, अवतारवाद-चमत्कारवाद के पाटों के बीच पीसा गया और उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप- एक ओर तो आज राम और रामायण को काल्पनिक और अनैतिहासिक बताया जा रहा है, तो दूसरी ओर सामन्तशाही का पोषक दुर्दान्त शासक सिद्ध किया जा रहा है। यहाँ तो राम कें अस्तित्व पर भी प्रश्नचिन्ह लग जाता है। जो लोग राम को काल्पनिक मानते हैं, वे तो स्पष्ट ही राम को मानते ही नहीं। पर जो राम को ईश्वर मानते हैं, ईश्वर का अवतार मानते हैं, वे भी राम के अस्तित्व को कहाँ मानते है? संपूर्ण रामचरितमानस यदि अखिल ब्रह्माण्ड पति ईश्वर की लीला मात्र है, तो इसमें जहाँ ईश्वर की 'ईश्वरता' का अपमान है, वहाँ राम के महान कर्तव्य की परिसमाप्ति भी है।

आर्य समाज राम को ऐतिहासिक महापुरुष, आर्य कुलभूषण, आर्य-जाति के महान पूर्वज के रूप में मानता है। आज भी लाखों वर्ष पश्चात् (लगभग ९ लाख वर्ष पूर्व राम का समय है), श्री राम के विमल यश और गौरव का मूल है- उनकी धर्मनिष्ठा व उनका स्वधर्म पालन! राम वैदिक धर्मी थे, वेदोक्त वर्णाश्रम धर्म में उनकी दृढ आस्था थी। वे मर्यादा पुरुषोत्तम थे। वे शौर्य एवं पराक्रमसंपन्न आदर्श क्षत्रिय थे। यहाँ हम राम को- क्षात्र धर्म के पुण्य प्रतीक के रूप में देखेंगें।

राम से पूर्व क्षत्रिय हतप्रभ हो रहे थे। परशुराम ने पितृवध के बदले में अनेकों क्षत्रिय राजाओं को बड़ी क्रूरता

से मार डाला था। रावण ने वानर-राष्ट्र को अपने साथ मिला कर अपने बल को बढ़ा लिया था। दण्डकारण्य और आर्यावर्त में भी अपनी छावनियाँ करके आर्य-राजाओं और देव-राजाओं पर छापे मारना, ऋषियों के यज्ञों का विध्वंस करना तथा अन्य क्रूर कर्म करना आदि राक्षसों के नित्य कर्म बन गये थे। आर्य-राजा इतने भयभीत थे कि जब ऋषियों ने दशरथ के 'अश्वमेध यज्ञ' के समय रावण के प्रतिकार की योजना बनाई, तो उन्होंने उस सभा में भी भाग लेने का साहस नहीं किया। सर्वत्र 'त्राहि-त्राहि' की पुकार मची थी।

ऐसे समय राम ने अद्‌भुत शौर्य पराक्रम से क्षात्र-धर्म के डूबते हुए पोत को बचाया।अपने शिक्षण काल में ही ताड़का और सुबाहू का वध करके और मारीच को अपने बल का परिचय देकर उन्होंने क्षत्रियत्व की गरिमा को बढ़ाया था। धनुष यज्ञ में सफलता प्राप्त करके और उसके पश्चात् विवाह करके लौटते हुए मार्ग में परशुराम का मानमर्दन कर उन्होंने अपने भावी पराक्रमों का मानबिन्दु कायम किया था। अपनी बुद्धिमत्ता, नीतिज्ञता और पराक्रम से, वनवास के अभिशाप को वरदान में बदलकर उन्होंने जीवन जीने की कला सिखाई। दण्डकारण्य में प्रवेश करते ही विराध आदि राक्षसों को मारकर उन्होंने ऋषियों के हृदयों में स्थान प्राप्त कर लिया था। ऋषियों ने उन्हें भरपूर सहयोग दिया। अगस्त्य ऋषि ने उन्हें नवीनतम वैज्ञानिक अस्त्र-शस्त्र दिये, जिनकी सहायता से वे अकेले ही खर-दूषण और उनकी चौदह हजार सेना का ध्वंस करने में समर्थ हो सके।

सीता-हरण के महाशोक के समय में भी वे अपने संतुलन को नहीं खोते। राम की दूरदर्शिता और उद्‌भट राजनीतिमत्ता का परिचय यह सुग्रीव की मित्रता और बालिवध के प्रसंग में मिलता है। विभीषण शरणागति के प्रसंग में राम की राजनीति और क्षत्रतेज दोनों देखें जा सकते हैं। लंका-युद्ध में तो मूर्तिमान काल बनकर वे राक्षस-सेना संहार करते हैं और अन्त में दुर्धुर्ष रावण को मारकर वे क्षत्रिय शिरोमणि के पद को पा लेते हैं। जुल्मों से सहमी धरती माता चैन की सांस लेती है और धर्मराज्य, रामराज्य अथवा सांस्कृतिक आर्य साम्राज्य की शुभ चांदनी सब ओर फैल कर अपूर्व सुख शान्ति का विस्तार करती है। वैदिक धर्म की शीतल छाँह में एकत्रित नर - नारी एक स्वर से राजा रामचन्द्र की जय पुकार उठते हैं।

श्री राम ने लंका विजय करके वहां स्वयं राज्य नहीं किया, किन्तु वहीं के निवासी रावण के भाई विभीषण को राज्य दे दिया । राम ने किसी निजी स्वार्थ के लिए नहीं, वरन् एक सच्चे राष्ट्रपुरुष के रूप में, राष्ट्र गौरव वृद्धि के लिए ही रावण से युद्ध किया था। सीता तो उसमें निमित्त बन गई थी। वे तो 'निशिचरहीन करों महि' की प्रतिज्ञा पहले ही कर चुके थे।

श्री राम भारतीय समाज के प्राण हैं। वे जन-जन में बसे हैं। आदर्श राम-राज्य की कल्पना आज भी की जाती है। युगों-युगों से श्रीराम का समुज्ज्वल चरित्र आर्य-जाति के कीर्तिस्तम्भ और प्रेरणास्रोत के रूप में मार्गदर्शन करता आया है।

जरूरी है कि हम श्रीराम के सही स्वरूप को समझें। हम केवल उनके चित्र की पूजा न करते रहें, उनके चरित्र की पूजा करें। राम एक ऐतिहासिक महापुरुष हैं, आर्य कुलभूषण हैं, हमारे महान पूर्वज हैं। उनके महापुरुषत्व से ही प्रेरणा लेकर हमारा राष्ट्र- व्यक्ति-धर्म, राष्ट्रधर्म,और क्षात्रधर्म की दीक्षा लेकर शक्तिमान हो सकता है।

अन्त में क्षात्रधर्म के परिपोषक, राष्ट्रपुरुष श्रीराम का उदात्त आदर्श, राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त के शब्दों में -

निज हेतु बरसता नहीं व्योम से पानी,
हम हों समष्टि के लिए व्यष्टि बलिदानी।
निज रक्षा का अधिकार रहे जन-जन को,
सबकी सुविधा का भार किन्तु शासन को।
मैं आर्यों का आदर्श बताने आया,
जन सम्मुख धन को तुच्छ बताने आया।
हो जायें अभय वे,
जिन्हें कि भम भासित हैं,
जो राक्षस-कुल से मूक सदृश शासित हैं।
मैं आया जिससे बनी रहे मर्यादा,
बच जाये प्रलय से, मिटे न जीवन सादा।
सन्देश यहाँ, मैं नहीं स्वर्ग का लाया,
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।

- उन्नत प्रौद्योगिकी रक्षा संस्थान,
गिरिनगर, पुणे-२५
मो.९४२१८३०५६१

-*सभा का व्यापक श्रावणी महोत्सव*-

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्त्वावधान में प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी श्रावणी वेदप्रचार महोत्सव व्यापक स्तर पर मनाया जायेगा। आगामी ४ अगस्त से १ सितम्बर २०२४ इस दौरान राज्य की सभी आर्य समाजों के लिए कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है। इसके लिए विद्वानों व भजनोपदेशकों को आमन्त्रित किया गया है। सभी आर्य समाजों को कार्यक्रम भेजा जाएगा।

आर्य समाज : गौरव और गिरावट

– रामनिवास गुणग्राहक

'आर्य' कहलानेवालों को आर्य समाज के बारे में कुछ बताने या समझाने की आवश्यकता है या नहीं? यह प्रश्न भी बहुत जटिल है। यदि कहें कि है, तो यह निश्चित रुप से लज्जा की बात है कि जिन्हें आर्य समाज से जुड कर काम करते हुए दस–बीस या अधिक वर्ष हो गये, फिर भी आर्य समाज को नहीं समझ सके, तो यह लज्जाजनक ही कहा जाएगा। यदि कहो कि आवश्यकता नहीं है, तो यह हमारी एक भूल को प्रकट करता है। यदि 'आर्य' कहलानेवाले आर्य समाज का आशय समझते, तो निश्चित रुप से उसके उद्देश्यों के अनुरुप अपना आचार–व्यवहार बनाकर देश और धर्म की सेवा करके स्वामी श्रद्धानन्द, पण्डित लेखक, मुनिवर गुरुदत्त विद्यार्थी आदि आर्यों की भाँति यश के भागी बनते। प्रतीत होता है कि हमारे लिए जिज्ञासुजी ने जो लिखा है, वह अधिक सटीक है –

हमने सुनकर भी न समझा,
महर्षि सन्देश तेरा।
हम समझकर भी पालन
न कर सके आदेश तेरा।।

जो भी हो, उचित यही होगा कि, आर्य समाज की चर्चा कर रहे हैं, तो इसके बारे में सार–संक्षेप में कुछ उपयोगी जानकारी देनी ही चाहिए। 'आर्य' शब्द संस्कृत भाषा की 'ऋ गतौ' धातु से बना है। '**गतेस्त्रयो अर्थाः ज्ञानं गमनं प्राप्तिश्चेति**' के अनुसार गति के तीन अर्थ होते हैं– ज्ञान, गमन और प्राप्ति! इस प्रकार आर्य में तीन गुण होते हैं – १) वह ज्ञानवान होता है। २) प्राप्तज्ञान के अनुसार ही वह गमन अर्थात् आचरण करता है। ३) तीसरा गुण यह है कि आर्य ज्ञानपूर्वक आरम्भ किये गये किसी कार्य को प्राप्ति अर्थात् सफलता से पहले अधूरा नहीं छोडता!

महर्षि मनु ने वेदों के बारे में – '**सर्वज्ञानमयो हि सः**' लिखकर घोषणा की है कि मानव के जीवन में काम आनेवाली सम्पूर्ण ज्ञान–विज्ञान हमें वेदों से ही प्राप्त होता है। इसीलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती – 'वेद का पढना–पढाना और सुनना–सुनाना, सब आर्यों का परमधर्म' की घोषणा करते है। हम कह सकते हैं कि नित्य वेद स्वाध्याय करते हुए वेदविद्या से विभूषित पुरुष,

'सं श्रुतेन गममेहि मा श्रुतेन विराधिषि!' का घोष करता हुआ वेद के अनुसार ही कर्म करने का संकल्प प्रकट करता है। इस संकल्प की पूर्ति के लिए वह जिस काम को हाथ में लेता है, उसे पूर्ण किये बिना नहीं छोडता। वही सच्चे अर्थों में आर्य है और ऐसे आर्यों के संगठन ही 'आर्य समाज' कहते हैं।

आर्य समाज का गौरव :-

किसी समाज, संस्था व संगठन की बात करें, तो उसके संस्थापक की भावनाओं का सम्मान करते हुए संस्थापक के सपनों-उद्देश्यों को पूरा करने में ही उस समाज-संस्था का गौरव है। आर्य समाजियों के लिए सुखद-सौभाग्य तो यह है कि उन्हें एक ऐसे महामानव के पदचिह्नों वर चलने का सुअवसर मिला है, जो मानवता के लिए वर्तमान में सबसे बडा और एक परिपूर्ण आदर्श था, है और युगों तक रहेगा। तप-त्याग और परोपकार के लिए सर्वात्मना समर्पित व्यक्तित्व के धनी महामानव दयानन्द सरस्वती महाभारत के बाद विश्व के एक मात्र ऐसे महामानव हैं, जिनकी कथनी (वाणी) और करनी अर्थात् व्यवहार में जीवन भर तक अन्तर नहीं मिलता। उन्होंने लोक कल्याण के पथ में आनेवाली कठिनाइयों से डरकर पीछे कदम हटाया हो अथवा अपने व्यक्तिगत सुख के लिए कभी कोई प्रयास किया है, ऐसा उनके जीवनवृत्त में कहीं नहीं मिलता। उनके लोककल्याण के लिए किये गये कार्यों को समग्रता से समेटना तो असम्भव जितना कठिन है। पुनरपि मैंने अपनी एक काव्यरचना में ऋषि दयानन्द के कार्यों को कुछ यूँ रेखांकित करने का प्रयास किया है -

व्यक्ति से लेकर विश्वस्तर
और जन्म से लेकर मरने तक।
हर उलझन ऋषि ने सुलझायी,
घर करने से भव तरने तक।

मानवता के मापदण्ड के रुप में गौरवान्वित महर्षि के द्वारा स्थापित 'आर्य समाज' और उससे जुडे हुए हर आर्य के लिए यही सबसे बडा गौरव है कि इनके द्वारा महर्षि के उद्देश्यों की सफल और सार्थकपूर्ति हो। आर्य समाज के छटे नियम में महर्षि लिखते हैं - 'संसार का उपकार करना, इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।' आर्य समाज के मुख्य उद्देश्य को प्रकट करने के बाद ऋषिवर आर्य पुरुषों को इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समर्थ बनाने के पावन ध्येय से लिखते हैं - 'प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना

चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।' सामुहिक और व्यक्तिगत कर्तव्य कर्मों की जो शिक्षा और व्यवस्था ऋषिवर ने हमारे लिए दी है, उसका सनिष्ठ पालन करना निश्चित रुप से सबके लिए गौरव की ही बात है। हमारी सामाजिक सोच और समाज से जुडकर हम अपने और आर्य समाज के गौरव को बढा सकें या बनाये रख सकें, इसके लिए ऋषिवर एक और स्वर्णसूत्र देते हैं - 'सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।' अगर हम आर्यजन महर्षि के इन मन्तव्यों को व्यवहार के धरातल पर स्वीकार और साकार कर सकें, तो हमारा भी गौरव बढेगा और वही हमारा गौरव आर्य समाज का गौरव बनकर विश्व के आंगन सूर्य जैसा प्रताप और प्रकाश फैला देगा।

महर्षि के सपने :-

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज को लेकर क्या-क्या सपने देखे थे? यह उनके वचनों में देखा जा सकता है। उपदेश मंजरी में लिखा है -'गाँव-गाँव में आर्य समाज की स्थापना करके मूर्तिपूजा आदि अनाचारों को दूर करके एवं ब्रह्मचर्य से तप का सामर्थ्य बढाकर सब वर्णों और आश्रमों के लोगों को चाहिए कि शारीरिक और आत्मिक बलों को बढावें तो सुगमता से शीघ्र लोगों की आँखे खुल जाएंगी और दुर्दशा दूर होकर सुदशा प्राप्त होगी।' क्या इस ऋषि-वचन पर हमें गम्भीरता पूर्वक विचार और सच्चे हृदय से व्यवहार करने के बारे में चिन्तन नहीं करना चाहिए? देखिये, ऋषिवर हमें कैसी प्रबल प्रेरणा कर रहे हैं - 'अपने पूर्वजों की, जिन महाशय आर्यों की हम सन्तान हैं, उनका दृष्टान्त अर्थात् उपदेश न हो। जैसी उनकी कीर्ति और प्रतापरुप मार्तण्ड भूगोल में प्रकाशित हो रहा था, उसका अनुकरण क्यों न करें?' आर्यों! ऋषि इससे अधिक हमें क्या कह सकते थे? और देखिये - 'यह बडे आश्चर्य की बात है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा ... शरीर, औषधि, वनस्पति, खाना, पीना आदि व्यवहार ज्यों के त्यों बने हुए हैं, हम आर्यों का हाल क्यों बदल गया?' आर्यों! ऋषिवर की पीडाजन्य प्रेरणा को हम कब समझेंगे और कब स्वीकार करेंगे?

हे आर्यों! अपने गौरव पर तनिक विचार करो, आर्य समाज के गौरव को बढाओ। ऋषि लिखते हैं - 'सब मनुष्यों के हित और सबके उपकार

में सदा चित्त रखें। परन्तु इससे अधिक जिस देश में अपना जन्म हुआ हो, उसके उपकार में पुरुषार्थ करे और अपने समीपवासी और मातापितादिक कुटुम्ब का नित्य हित करे।' आर्यों! हमारे जीवन-सुधार के लिए ऋषिवर ने क्या कुछ नहीं किया, क्या कुछ नहीं लिखा। इसपर हम चिन्तन करें कि हमने वह कितना समझा, कितना स्वीकार किया? महर्षि ने जो सीख और सन्देश ब्रह्म समाज वालों को दिया था, उसकी आज हम आर्यों को महती आवश्यकता है। उन्होंने लिखा है - 'जो उन्नति चाहो, तो आर्य समाज के साथ मिलकर उसके उद्देश्यानुसार आचरण करना स्वीकार कीजिए, नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा। जैसा आर्य समाज आर्यावर्त देश की उन्नति का कारण है, वैसा दूसरा नहीं हो सकता।' क्या हम आर्य कहलानेवालों ने आर्य समाज के उदेश्य के अनुसार आचरण करना स्वीकार किया? नहीं तो क्यों नहीं किया? यह भी सोचों कि कब कर सकेंगें? मैं प्रायः अपने प्रवचनों में कहता रहता हूं कि महर्षि दयानन्द प्रतिपादित सत्य सनातन वैदिक धर्म का व्यावहारिक उदय तो होना तय है। सत्य को दबाने-छिपाने का सामर्थ्य किसी में नहीं है, देखना यह है कि यह सौभाग्य किस पीढी को मिलता है? यह पीढी अपने तप और पुरुषार्थ से अगली पीढी का मार्ग प्रशस्त करती है, तो थोडासा पुण्य मिल ही जाएगा। यदि हम ऐसा नहीं कर सके, तो हमारी गणना ऋषि भक्त आर्यों में कोई क्यों करेगा?

आर्य समाज की गिरावट :-

वर्तमान में आर्य समाज के कार्य और प्रभाव की बात करें, तो इससे सब सज्जनों के हृदय में एक चिन्ता और असन्तोष के भाव उत्पन्न होते हैं। सम्प्रति और संसाधनों की बात करें, तो आर्य समाज उन्नति करता प्रतीत होता है, मगर चिन्ता की बात यह है कि यह अपनी रचनात्मकता खो चुका है। आर्य कहलाने वालों का जीवन आर्य सिद्धान्तों और जीवन मूल्यों पर खरा सिद्ध नहीं हो रहा। समाज व राष्ट्र में व्याप्त दोषों, कुरीतियों और अन्धविश्वासों के विरुद्ध खुलकर बोलनेवाला आर्य समाज जब तक आत्मचिन्तन करके अपने दोषों पर खुले मन-मस्तिष्क से विचार न करेगा, तब तक वह किसी के साथ न्याय नहीं कर सकेगा। 'स्व अज्ञानज्ञानिनो विरलाः।' जैसी उक्तियाँ आज आर्य समाज पर भी चरितार्थ होती दिख रही हैं। मानव के लिए अपने दोषों पर न्यायदृष्टि से देखना सदैव कठिन रहा है,

मगर यह हर मनुष्य के लिए इतना आवश्यक है कि अपने दोषों, दुर्गणों का सुधार किये बिना कोई मनुष्य कभी सच्चा सुख नहीं पा सकता। आर्य कहलाने वालों को भी अपनी कमियों पर चिन्तन-मनन करते रहना चाहिए। आर्य समाजी ऐसा नहीं कर पा रहे, लेखन-प्रवचन में आर्य जनों को व्यवहार सुधारने की प्रेरणा करना किसी को अच्छा नहीं लगता। आर्य समाज को सिद्धान्तजीवी बनाने की मनीषा से जब भले जनों के साथ वार्तालाप होता है, तो कडवा सच यह निकलकर आता है कि आर्य समाज की समस्याएँ क्या हैं, यह तो सब जानते हैं, मगर उनका संसाधन क्या है, इस पर चर्चा करना सबके लिए कठिन है। समाधान किसी के पास है, भी तो केवल वाचिक है, व्यावहारिक नहीं। क्योंकि आर्य समाज के कर्णधार कहे जानेवाले सिद्धान्त की बात सुनने तक को तैयार नहीं। उनको चुनकर पदाधिकारी बनानेवाले भी व्यक्तिगत सम्बन्धों से आगे जाकर समाजहित नहीं देख पा रहें हैं।

आर्य समाज प्रचारजीवी संगठन है, जबकि शेष सभी परम्परा- पोषित पन्थ है। धर्म के नाम पर प्रचलित मत-पन्थ परम्परागत विरासत के रुप में पीढी दर पीढी चलते है, मगर आर्य समाज एक बुद्धिवादी संगठन है, जो तर्कपूर्ण ढंग से सत्य, धर्म और न्याय पर आधारित मानवीय गुणों की बात करता है। सत्य, धर्म की तर्कपूर्ण विवेचना करते हुए मानवीय सद्‌गुणों का प्रचार वही कर सकता है, जिसका स्वयं का जीवन बौद्धिक दृष्टि से तर्कसंगत हो तथा व्यावहारिक दृष्टि से मानवीय सद्‌गुणों से और परिपुष्ट हो। आर्य समाज के प्रचारक प्रारम्भिक युग में ऐसे ही थे, तभी तो आर्य समाज का गौरव शिखर की चोटी पर था। तब एक अंग्रेज विद्वान चार्ल्स एच हेम सेथ ने लिखा था - ''उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक ईसाइयों को छोडकर आर्य समाज ने भारत की सभी धार्मिक संस्थाओं के सार्वजनिक कार्यक्रमों को पूरा करने में उनका नेतृत्व किया।'' इस दृष्टि से आज हम कहाँ खडे है ? यह बताने की आवश्यकता नहीं।

आज आर्य समाजरुपी यंत्र का हर अंग अपनी मर्यादा का पालन नहीं कर रहा। हमारे कर्णधारों का सिद्धान्तजीवी प्रचारक काँटे की तरह चुभते हैं। इसलिए प्रचारकों का 'सततं प्रियवादिनः' कोटि का एक वर्ग खडा हो गया है। जो प्रचारक सुधारक की

भूमिका त्याग देता है, वह केवल परिवार-पोषण मात्र करता है, पुण्य नहीं करता। अन्यों को देखकर आर्य समाज की कुछ सम्पन्न सभाओं व धनीमानी लोगों ने वेद प्रचार रथ तो बनवा लिये, मगर उनपर वेद का विद्वान् रखने का सत्साहस किसी ने नहीं दिखाया, केवल भजनोपदेशकों के बल पर वेदविद्या का प्रचार-प्रसार करने का सपना कोई बुद्धिमान तो देख नहीं सकता। यह गिरावट हो तो है। इन विषयों पर तथा अन्य भी पतनगामी प्रवृत्तियों को बढानेवाली गतिविधियों का ध्यान देकर सुधार किया जाए, तो सुफल संदर्शन भी सर्वथा सुलभ है। हमें तो इस नीति वचन पर विश्वास रखना चाहिए - प्रायः

कन्दुकपातेन उत्पतति आर्यः पतन्नति।
तथा त्वन्नर्ष पतति मृतपिण्ड पतनं यथा।।

अर्थात् आर्य पुरुष का पतन भी गेंद की तरह ही होता है। गेंद जैसे ही नीचे गिरती है, पुनः उसी वेग से उपर को उठ जाती है। अनार्यों का पतन मुत्पिण्ड- मिट्टी के ढेलें जैसा होता है कि वह गिर गया, तो बस गिरा ही पडा रहता है। यह देश आर्यावर्त है, इसके निवासी आर्य हैं। ये मृत्पिण्ड की तरह सदा गिरे पडे नहीं रह सकते। आर्यों! उठो! आलस्य-प्रमाद और अविद्या को त्यागो! गिरावट नहीं, गौरव आपकी प्रतीक्षा में है।

- भरतपुर, राजस्थान
मो.९०७९०३९०८८

विविध स्थानों पर संस्कार शिविरों का आयोजन

छात्रों के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नयन हेतु 'मानवता संस्कार एवं आर्यवीर दल शिविरों' का आयोजन किया गया है। साथ ही कन्याओं में आत्मसुरक्षा एवं चरित्र का विकास होकर वे सर्वदृष्टि से सुविकसित होवें, इसलिए 'आर्य कन्या संस्कार शिविरों' का आयोजन किया जा रहा है। महाराष्ट्र सभा एवं स्थानीय आर्य समाजों तथा शैक्षिक संस्थाओं के संयुक्त तत्वावधान में ये शिविर होंगें। कुछ स्थानों पर शिविर यशस्विता के साथ सम्पन्न हुए, तो कुछ स्थानों पर शिविर चल रहे हैं। तो कई जगह शिविरों की तैयारी चल रही है। वांगजेवाडी, सिद्धेश्वर मन्दिर परिसर तथा नांदगाव में शिविर सम्पन्न हुए और उदगीर, सोलापुर, आळंद में शिविरों की तैयारी चल रही है।

शोक समाचार

डॉ.धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री को पत्नीशोक

आर्यजगत् के प्रसिद्ध विद्वान एवं दिल्ली संस्कृत अकादमी के पूर्व सचिव प्रो.डॉ.धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री की धर्मपत्नी श्रीमती प्रतिभा शास्त्री का दि.२ अप्रैल २०२४ को असामयिक दुःखद निधन हुआ। उनकी आयु ५६ वर्ष की थी। वे कई दिनों से बिमार चल रही थी। वे अपने पश्चात् पतिदेव, पुत्र, स्नुषा को छोड संसार से विदा हो गयी। आर्य प्रतिनिधि सभा म.प्रदेश, विदर्भ के पूर्व प्रधान श्री जयसिंहजी गायकवाड की वे ज्येष्ठा सुपुत्री थी। श्रीमती प्रतिभाजी के देहावसान से शास्त्री परिवार को गहरा आघात पहुंचा। उनके पार्थिव पर दुसरे दिन प्रातः ११ बजे पूर्ण वैदिक पद्धति से अन्तिम संस्कार किये गये। गुरुकुल गौतम नगर के ब्रह्मचारियों ने यह संस्कारकर्म पूर्ण किया। इस अवसर पर पू.स्वामी प्रणवानन्दजी सरस्वती ने सभी की ओर से श्रद्धासुमन अर्पित किये।

श्रीमती कमलाबाई कच्छवा का निधन

आर्य समाज औराद शहाजानी के प्रधान डॉ.श्री प्रकाशजी कच्छवा की माताजी श्रीमती कमलाबाई जडावसिंह कच्छवा का दि.५ मई २०२४ को दोपहर ३.१५ बजे वृद्धावस्था से दुखद निधन हुआ। वे अपने पश्चात् ३ पुत्र, २ कन्यायें, दामाद, पुत्रवधुयें, पौत्र, प्रपौत्र आदि को छोडकर संसार से विदा हुई। माताजी के पार्थिव पर दूसरे दिन प्रातः ९ बजे पूर्ण वैदिक संस्कार पद्धति से अन्तिम संस्कार किये गये। पं.राजवीरजी शास्त्री के पौरोहित्य में यह संस्कार सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर महाराष्ट्र सभा के मन्त्री श्री राजेन्द्रजी दिवे, उपमन्त्री विजयकुमारजी कानडे आदि उपस्थित थे। श्रीमती कमलाबाई स्वा.सै. पत्नी होने के कारण महाराष्ट्र शासन की ओर से तहसीलदार के प्रतिनिधि ने आकर पार्थिव देह पर पुष्पचक्र अर्पण किये। माताजी पूर्णतया धार्मिक, मिलनसार, गोभक्त, परिवार की निर्मात्री तथा दानप्रदात्री थी। तीसरे दिन पुरोहित पं.सुरेन्द्र गोस्वामी ने शान्तियज्ञ सम्पन्न कराया।

उपरोक्त दिवंगत आत्माओं की सद्गति के लिए प्रार्थना एवं शोकसंवेदनाएं!

॥ओ३म्॥

माझा मराठीची बोलु कवतिके। परि अमृतातेही पैजेसीं जींके।
ऐसी अक्षरेंचि रसिकें। मेळवीन॥ (संत ज्ञानेश्वर)

* मराठी विभाग *

* उपनिषद संदेश *

सत्यमेव जयते !

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।
येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्॥

(मुण्डकोपनिषद-६/४१)

अर्थ - सत्याचाच विजय होतो. असत्याचा कदापि नव्हे. सत्यानेच मोक्ष प्राप्तीचा मार्ग सर्वत्र पसरला आहे. जेथे त्या सत्य स्वरुपाचा परमश्रेष्ठ असा निधी आहे, त्या मार्गाने कामनाविरहित असे(निष्काम) ऋषीजन निश्चितच पुढे जातात.

* दयानंद वाणी *

परमेश्वर निराकार व सर्वव्यापक

परमेश्वर हा सर्वशक्तिमान व सर्वव्यापक असल्यामुळे जीवांना आपल्या व्याप्तीने वेदविद्येचा उपदेश करण्यात त्याला मुखादींची आवश्यकता नाही. कारण आपल्याहून वेगळ्या असलेल्या दुसऱ्या माणसाला बोध करण्यासाठी जिव्हा(जीभ) आदीद्वारा आणि वर्णोच्चाराची गरज असते. स्वतःसाठी काही त्यांची गरज नसते. कारण मुख आणि जीभ यांचा वापर न करताही मनामध्ये अनेक व्यवहारांचे चिंतन आणि शब्दोच्चार होत असतात. कानामध्ये बोटे घालून पाहा! मुख, जिव्हा, टाळू आदी स्थानांचे कसे-कसे शब्द होत आहेत. याच पद्धतीने जीवांना अंतर्यामी रूपाने उपदेश केला आहे. मात्र केवळ इतरांना समजावून सांगण्यासाठी शब्दांचा उच्चार करण्याची आवश्यकता आहे. परमेश्वर निराकार आणि सर्वव्यापक आहे. तो आपल्या अखिल वेदविद्येचा उपदेश जीवस्थ स्वरुपाने जीवात्म्यामध्ये व्यक्त करतो. मग तो माणूस आपल्या तोंडाने उच्चार करून इतरांना ऐकवितो. म्हणून ईश्वरामध्ये हा दोष येऊ शकत नाही. (सत्यार्थ प्रकाश-७ वा समुल्लास)

महर्षी दयानंद के ऐतिहासिक पुणे प्रवचन

महर्षी स्वामी दयानंद सरस्वती हे २० जून १८७५ रोजी पुणे येथे आले होते. न्यायमूर्ती म.गो. रानडे, महादेव मोरेश्वर कुंटे यांनी स्वामीजींना पुण्यात येण्याचे निमंत्रण दिले होते. ४ ऑगस्ट १८७५ पर्यंतच्या अडीच महिन्यात पुणे निवासात स्वामीजींची जवळपास ५० व्याख्याने या शहरात संपन्न झाली. पण यांपैकी १५ व्याख्यानेच उपलब्ध आहेत. श्री महादेव कुंटे व श्री गणेश जनार्धन अगाशे यांनी दररोज ही व्याख्याने मराठीत अनुवादित करून लिपिबद्ध केली व मराठी वाचकांसाठी ही उपलब्ध करून दिली होती. आता आम्ही सर्व वाचकांसाठी ही व्याख्याने दर महिन्यास या अंकात प्रकाशित करीत आहोत. - संपादक

'वेद' विषयक व्याख्यान

(उपदेश पाचवा - वेद विषयक व्याख्यान)

स्वामी दयानंद सरस्वती यांनी बुधवार पेठेतील भिड्यांच्या वाड्यात ता.१३ जुलै १८७५ रोजी रात्री ८ वा. 'वेद' या विषयावर दिलेल्या व्याख्यानाचा सारांश -

ओम् दृते दृंह् मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।।

(यजु.३६/१८)

आजच्या व्याख्यानाचा विषय 'वेद' हा आहे. तीन प्रकारे या विषयाचा विचार केला पाहिजे.

१. वेदाची उत्पत्ती कशी?
२. वेदाचा कर्ता कोण ? आणि
३. वेदाचे प्रयोजन काय?

परमेश्वर वेदाचा कर्ता आहे, वेद म्हणजे ज्ञान! वेद म्हणजे विद्या! ज्ञान किंवा विद्या हे सर्व सृष्टी पदार्थांमध्ये उत्तम आहे. ज्ञान हे सुखाचे कारण आहे. ज्ञानावाचून सुखकारक पदार्थही दुःखकारक होतो; कारण ज्ञानावाचून पदार्थाची योग्य योजना करता येत नाही. अनंत ज्ञान ईश्वराचे आहे म्हणून **'अनंता वै वेदाः।'** असे वचन आहे. अनंत ही त्याची संज्ञा आहे. अनंत ज्ञानसंपन्न परमेश्वर मनुष्याची योग्यता वाढविण्याकरिता व त्या थोरपदवीस चढविण्याकरिता सहज प्रवृत्त आहे व हा हेतु सफळ करण्याकरिता विद्येचा प्रकाश करतो, तो प्रकाश 'वेद' आहे. मनुष्य

ह्या अनंत ज्ञानाचा म्हणजे वेदज्ञानाचा योग्य अधिकारी आहे. ह्या ज्ञानाची उत्पत्ती मनुष्यापासून नाही.

आता ईश्वर जर साकार नाही तर त्याने वेदाचा प्रकाश कसा केला? असा प्रश्न उद्भवतो. तालु, जीभ, ओष्ठ ज्या अधिकरणी नाहीत, तेथून शब्दोच्चार कसा घडेल? यास उत्तर सोपे नाही. ईश्वर सर्वशक्तिमान आहे. मग सहजच मुखादी इंद्रियांची अपेक्षा संभवत नाही. शब्दोच्चारास संयोगादी कारणे अल्प शक्तीला लागतात. किंच–

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता
पश्चत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति विश्वं न च तस्यास्ति वेत्ता
तमाहुरग्र्यं पुरुषं पुराणम्।।

(मुण्डकोपनिषद्) (श्वेताश्वतर उ.३/१९)

आपण सर्व कबूल करतो की हातांवाचून ईश्वराने सर्व सृष्टीची रचना केली, मग मुखावांचून वेदाची रचना का होणार नाही?

कोणी अशी शंका घेईल की, वेदरुपी पुस्तके रचणे हे शक्य काम आहे. याकरिता ईश्वराच्या साक्षात् कृतीची कल्पना करणे नको. परंतु या स्थळी जरा विचार केला पाहिजे. विद्या आणि जडसृष्टी रचना यांच्यामध्ये महदंतर आहे. केवळ जडसृष्टीरचना परमेश्वराने केली, यावरुन त्याचे मोठे माहात्म्य सिद्ध होत नाही. कारण विद्येपुढे जडसृष्टीरचना कांहीच नाही. म्हणून विद्येचे कारणही ईश्वरच आहे, असे मानले पाहिजे. इतर क्षुद्र पदार्थ निर्माण करून विद्यारुपी इवेद ईश्वर उत्पन्न करणार नाही असे कसे घडेल?

आता वेदविद्या ईश्वरापासून उत्पन्न झाली आहे म्हणजे काय? असा प्रश्न येतो, त्यास उत्तर असे आहे की, आदिविद्या म्हणजे सर्व विद्येची मात्र मूलतत्त्वे ईश्वरापासून प्रकाशित झाली आहेत. त्याचा विशेष प्रभाव मनुष्याचे हातून अभ्यासाने होतो.

आता ही आदिविद्या म्हणजे वेद ईश्वराने प्रकाशित केले आहेत याची प्रमाणे–

१. प्रथम प्रमाण हे की वेदांत पक्षपात नाही. ईश्वर सर्व जगावर अनुग्रह करणारा आहे. म्हणून तत्प्रणीत जो 'वेद' या मध्ये पक्षपात असणे हे कसे साजेल? तसेच ईश्वर न्यायी आहे, म्हणून पक्षपात संभवत नाही.

ज्यात पक्षपात आहे, ती विद्या ईश्वर प्रणीत नाही. यास उदाहरण वेदाची भाषा कोणती? संस्कृत ना? संस्कृत भाषा वेदाची आहे, हा पक्षपात नव्हे का? असे कोणी म्हणेल, तर हे म्हणणे बरोबर नाही. संस्कृत भाषा ही सर्व भाषांचे मूल

आहे. इंग्रजी सारख्या भाषा तिजपासून परंपरेने उत्पन्न झाल्या आहेत. एक भाषा दुसऱ्या भाषेचा अपभ्रंश होऊन उत्पन्न होते, 'वयं' या संस्कृत शब्दामध्ये 'यम्' यांचे संपृसारण होऊन इंग्रजी 'वुई' हा शब्द उत्पन्न झाला. तसेच 'पितर' यापासून 'पेतर' व 'फादर', 'यूयं' यापासून 'यू', 'आदिम' यापासून 'आदम' असे अपभ्रंश कांही नियमांस अनुसरुन होतात व कांही अपभ्रंश यथेष्टाचाराने होतात. याविषयी विशेष सांगणे नको. ईश्वरात जसा अनंत आनंद आहे, तसाच संस्कृत भाषेत अनंतानंद आहे. ह्या भाषेंसारखी मृदू, मधुर, व्यापक सर्व भाषेची माता, अशी दुसरी कोणती भाषा आहे?

आता कोणी म्हणेल की ही भाषा एकाच देशांतील का असावी? पण पाहा संस्कृत भाषा एका देशाची नाही. सर्व भाषेची मुळे संस्कृतात आहेत म्हणून सर्व ज्ञानाचे मूळ जे वेद, ते संस्कृतात आहेत. ज्या ज्या देशांत संस्कृत भाषा शिरली आहे, त्या-त्या देशांतील विद्वान लोकांच्या मनाचे आकर्षण करीत आहे व ही दुसऱ्या भाषेच्या मातृस्थानी आहे, अशी योग्यता मिळवीत आहे.

पुनरपि वेदांतीलच कांही कांही मुख्य गोष्टीचा प्रचार जगतातील सर्व देशांत चालत आहे. यहूदी लोक नेहमी वेदी करीत व यज्ञ करीत. हे ज्ञान त्यांना कोठून प्राप्त झाले? त्यांना होता, उद्गाता, ब्रह्मा यांच्या व्यवस्थेने यज्ञ करणे हे ठाऊक नव्हते, यात विशेष नाही. आम्हां आर्य लोकांच्या रीतीने त्यांना विस्मरण पडले. पारशी लोकही अग्यारीत अग्निपूजा करतात. हा आचार वेदमूलक नव्हे काय?

वेदामध्ये पक्षपात नाही, हे स्पष्ट आहे. यहूदी लोक अन्य लोकांचा द्वेष करण्यास शिकले होते. मुसलमान लोक अन्य लोकांस काफर म्हणतात व त्या समजुतीस त्यांच्या धर्म पुस्तकांत उत्तेजन आहे. अशा प्रकारच्या अभिमानास वेदांत उत्तेजन नाही. म्हणून वेद ईश्वरप्रणीत आहेत, असे सिद्ध होते.

२) दुसरे-वेद हा सुलभ ग्रंथ आहे. अर्वाचीन पंडित अवच्छेदक अवछिन्न पदे घालून मोठे लांब परिष्कार करतात, पण त्या परिष्कारांत शब्दजाल मात्र असते. विशेष अर्थगांभीर्य नसते. तसा वेद ग्रंथ नाही.

आता कोणी म्हणेल की, दुर्बोधामुळे परिष्कारातील काठिण्यपांडित्य सूचक आहे. तर कावळे परस्परांत जेंव्हा भांडतात, तेंव्हा त्यांच्या भाषेचा अर्थ कोणास समजत नाही, म्हणून दुर्बोधामुळे काकभाषेत पांडित्य संभवते काय? अस्तु

वाक्‌सुलभता व अर्थ गांभीर्य हे सामर्थ्याचे प्रमाण आहे. ज्ञानप्राप्ती क्लेशा वाचूंन होणे हे ईश्वर कृतिदर्शक आहे. उगीच शक्यता अवच्छेदक शक्यता अवच्छिन्न म्हणण्याबद्दल सुलभ शब्दांनी वात्स्यायनांनी प्रतिपादन केले ते पहा :-

प्रमातुः प्रमाणानि
प्रमेयाधिगमार्थानीति शक्यप्राप्तिः।।
(न्या.वा.भाष्य १/१/३२)

या सुलभतेमुळे वात्सायन महापंडित आधुनिक शास्त्रांपेक्षा वेडा ठरतो काय? नाही. मग वात्सायनाच्या भाषेपेक्षा वेदाची भाषा लक्षपट सोपी आहे.

३) तिसरे प्रमाण असे आहे की, वेदापासून अनेक विद्या व शास्त्रे सिद्ध होतात. जसे -

नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवः।
तेभ्यो द्रश प्राचीर्दश दक्षिणा दश
प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः।
तेभ्यो नमो अस्तु ते नोऽवन्तु तेनो मृडयन्तु
ते यं द्विष्मो।
यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः।।
(य.स.अ.१६)(मं.६४)

मनुष्याने केलेल्या पुस्तकात एका विषयाचे प्रतिपादन असते, जैमीनीच्या सर्व मताचा ओघ एक धर्म व धर्मी या विषयी विचार करण्यात संपला. कणादाच्या मनाचा ओघ षट्‌ पदार्थाच्या विवेचनाच्या विचारांत संपला. तसेच वैद्यक ग्रंथ, व्याकरणभाष्य व योगशास्त्र यांची व्यवस्था करण्यातच पतंजलीचे सर्व आयुष्य संपले. परंतु वेद हे अनंत विद्याचे अधिकरण आहेत. म्हणून वेद मानुषकृतीचे नव्हते. ते ईश्वर प्रणीत आहेत. आता सर्व विद्यांचे अधिकरण वेद आहेत. म्हणजे सर्व विद्यांच्या मूळतत्वाचे दिग्ददर्शनमात्र वेदांत आहे. उदाहरण घेऊ या.

वाराह्योपानहोपनह्यामि.।
सहस्त्रारित्रांशतारित्रां नावमित्यादि.।।
(ऋ.१/१६/५)

एकाच मे तिस्रश्च मे पंच च मे।।
(य.सं.)(१८/२४)

प्रथम उदाहरणांत रचना विशेषाचे निरुपण केले आहे. दुसऱ्यांत नौका शास्त्राचे निरुपण केले आहे, तिसऱ्यांत गणित शास्त्राचे निरुपण आहे.

आता कोणी म्हणेल की, ईश्वराने सर्व विद्येची मूळतत्वेच का प्रकाशित केली? व साद्यंत विद्यांचे व कलांचे विवरण का केले नाही? त्यास माझे म्हणणे आहे की, ईश्वराने मनुष्यमात्राच्या बुद्धिव्यापारास तसेच बुद्ध्युन्नतीस अवकाश ठेवला.

४) चौथे कोणी अशी शंका घेईल की, अनेक पुरुषघटित वेद आहेत. यास उत्तर, अनेक पुरुषघटित वेद असते तर

वेदांत एकवाक्यतादि गुण आहेत त्याची व्यवस्था कशी होणार?

आता पूर्वकाळी निरनिराळ्या विद्या भरतखंडामध्ये वेदाच्या योगाने प्रसिद्ध होत्या. म्हणून त्या विद्या ही नष्ट झाल्या. मुसलमानांनी लाकडे जाळण्याबद्दल पुस्तके जाळली, जैनांनी असाच अनर्थ केला. सन १८५७ सालच्या सुमारास दंगा झाला.त्यावेळी कोणी एका युरोपियनाने अमृतराव पेशवे यांचे मोठे पुस्तकालय जाळले. अशी लोकवंदता आहे. यावरुन किती विद्या नष्ट होत आली असेल? याचा विचार करा.

उपरिचर म्हणून राजा होता. तो नेहमी भूमीस स्पर्श न करिता हवेतून हिंडत असे.पूर्वीचे लोक विमानातून लढाया करीत. त्यास विमान रचण्याची उत्कृष्ट माहिती होती. विमान रचनेविषयी मी एक पुस्तक पाहिले आहे. अहो त्यावेळी दारिद्रयाच्या घरी देखील विमाने होती. या व्यवस्थेपुढे आगगाडीची प्रतिष्ठा ती काय?

५) पाचवे, वेद सनातन सत्य आहेत. त्यास त्याचे सामर्थ्य फार मोठे आहे. पाहा, शार्मण्य(जर्मन) देशांतील लोक वेदांचे अवलोकन करून त्यांची कीर्ती व गुणानुवाद गात बसले आहेत. या प्रमाणे सर्व देशांतील विद्वानांच्या मनाचे आकर्षण वेदातील सत्याच्या सामर्थ्याने होत आहे. आता एकंदरीत सत्यता, एकवाक्यता, सुगमरचता, भाषालावण्य, निःपक्षपात, सर्व विद्यामूलकत्व हे गुण वेदांत मात्र संभवतात. यावरून वेद ईश्वरप्रणीत आहेत. अलीकडील आमचे इंग्रजी शिकलेले लोक इंग्रजी ग्रंथातील लटपट पाहून ती खरी आहे, असे मानतात हे बरे नव्हे. आमचे वडील बंधू शास्त्रीलोकपरंपरा न सोडण्याविषयी हट्ट धरून बसतात, ते ही बरे नाही! कारण आगगाडीतून प्रवास करतांना परंपरेचां हट्ट कोठे जातो? कां बाप अंधळा असला म्हणजे पुत्राने पण आपले डोळे फोडावेत? मतलबापुरती परंपरा स्वीकार केल्याने धर्म प्रबंधांत सर्व घोटाळा झाला आहे, या घोटाळ्याचा विचार केला म्हणजे काळीज फाटते.

पाहा बरे, जिकडे तिकडे जातिविभाग होऊन आपण निर्बळ होऊन गेलो आहोत. पूर्वी आर्य लोकांमध्ये 'शतघ्नी' म्हणजे तोफा होत्या व 'भुशुंडी' म्हणजे बंदुका होत्या. हे सर्व आमचे बळ कोठे गेले? 'अग्नी' अस्त्रादिकांचा लोप कसा झाला? हल्लीचे पंडित लोक असे म्हणतात की केवळ मंत्रोच्चाराच्या सामर्थ्याने पूर्वी आग्नेयास्त्रादी घटत होते;

पण असे नाही. मंत्राच्या योगाने अग्नी उत्पन्न होत होता असे मानावे, तर मंत्र म्हणणारा कसा जळत नव्हता? तर असे नव्हे, मंत्र म्हणजे विशेष अक्षर! अनुपूर्वीत म्हणजे शब्दात व अर्थात संकेत मात्र संबंध आहे. सामर्थ्य नाही. जसे अग्नी शब्दात दाहकत्व नाही. तद्वत मंत्र जपल्याने नुसता काळक्षेप होतो. व्रतबंधाचे वेळी मुलाचे अल्प सामर्थ्य असल्यामुळे एकच मंत्र वारंवार त्यास म्हणावा लागतो. म्हणून हा मंत्राचा खरा विनियोग नव्हे! मंत्र म्हणजे विचार! राजमंत्री म्हणजे विचार करणारा! हाच अर्थ खरा असे न मानावे. राजमंत्री किंवा अमात्य म्हणजे राजाची माळा घेऊन जप करणारा असा अर्थ करावा लागेल. मंत्री शब्दाचा अर्थ जप करणारा नव्हे, परंतु विचार करणारा हा होय. तर वेदमंत्राचा खरा विनियोग म्हणजे बुद्धिवैशद्य, बुद्धयुन्नति, बुद्धिप्रकाश, बुदिद्धसामर्थ्य ही उत्पन्न करणे हा आहे. अशा प्रकारचे सामर्थ्य पूर्वी आर्य लोकांत होते. ते एकच मंत्र घेऊन जपत बसत नसत. परंतु अनेक मंत्रांची मीमांसा करीत. म्हणूनच वारुणास्त्र, अग्नेयास्त्रादिकांची त्यास माहिती असे. म्हणजे पदार्थाच्या गुणांची माहिती करून त्याची विशेष योजना ते करीत होते. विशल्यौषधी म्हणून त्यास एक औषधी माहित होती. कसलीही जखम असो या औषधीने लवकर भरून येत असे. पूर्वी बंगालकडे येथील लोक आर्य लोकांच्या वैद्यक विद्येची थट्टा करीत असत. परंतु डॉक्टर महेंद्रनाथ सरकार यांसारख्या विद्वान पंडितांनी चरकसुश्रुता सारख्या ग्रंथाचे उज्जीवन केले. येणे करुन इंग्रजी शिकलेल्या लोकांचा भ्रम उडाला, महेंदनाथाने प्राचीन आर्य ग्रंथाचे उज्जीवन करण्याकरिता पुष्कळ द्रव्य मिळविण्याचा उद्योग चालविला आहे, हे त्यास भूषण मोठे आहे. पदार्थज्ञानाविषयी वेदांत मोठी दक्षता आहे.

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुः सामलक्षणम्।।
(मनु.१/२३)

सृष्टि पदार्थांचे विवेचन करण्याकरिता., तसेच ईश्वराच्या ज्ञानप्राप्तीकरिता, बुद्धिसामर्थ्य संपादन करणे हे वेदाध्ययनाचे प्रयोजन आहे.वेदोत्पत्ती ब्रह्मापासून झाली व व्यासाने संग्रह म्हणजे संहिता केली, असे हल्लीचे पंडित लोक म्हणतात. परंतु हे म्हणणे बरोबर नाही. कारण मनुस्मृतीत ब्रह्मदेवाने अग्नी, वायू, आदित्य व अंगिरा या चार ऋषी पासून वेद शिकून पुढे वेदाचा प्रसार केला, असे लिहिले आहे. ब्रह्मदेवास चतुर्मुख नांव आहे. म्हणून

त्यास खरोखर चार मुखे आहेत, असे नाही. खरोखर चार मुखे असती तर बिचाऱ्या ब्रह्मदेवास मोठे दुःख झाले असते. तो सुखाने निजला असता कसा? तर असे नव्हे, **'चत्वारो वेदाः मुखे यस्य इति चतुर्मुखः'** असा समास केला पाहिजे. प्रथमारंभी ईश्वरीय ज्ञानापासून या चार ऋषींच्या ज्ञानांत वेद प्रकाशित झाले व त्यापासून ब्रह्मदेव शिकला आणि नंतर त्याने सर्व सृष्टीत प्रसार केला आणि त्यापासून मनुष्यास ज्ञान प्राप्त झाले. म्हणून त्यास 'वेद' असे नाव आहे आणि पूर्वी ऋषी एकमेकांपासून श्रवण करीत आले म्हणून 'श्रुती' असे वेदांस नाव आहे.

'अग्निर्वायुरादित्य अंगिरसः' या चार ऋषींस वेद प्रथम प्राप्त झाले. यावर कोणी म्हणेल की हे आदिऋषी चार का होते? एक किंवा अधिक का नव्हते. त्यास ही शंका पाच किंवा तीन असते तरी संभवतो. हा अशोकवाटिका न्याय होईल.

आता कोणी म्हणतील की, वेद आधुनिक आहेत आणि नित्य नाहीत? कारण ब्रह्मदेवाच्या मनामध्ये ज्ञानलहरी उत्पन्न झाली व त्या काळापासून वेदाची परंपरा सांगता येतो, तेंव्हा नित्य कसे? तर असे नव्हे! ईश्वराला अपूर्व ज्ञान आहे आणि ज्ञान रचना नित्य आहे. जसे सृष्टीला तसाच वेदाला आविर्भाव तिरोभाव मात्र आहे, कारण

सूर्य्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।

(ऋ.सं.१०/१९०/३)

इत्यादी हे वचन ईश्वरीय नित्यज्ञानाचे प्रमाण आहे. ब्रह्मदेवाच्या मागे विराट झाला. त्या मागे वशिष्ठ, नारद, दक्षप्रजापती, स्वायंभुव मनू असे झाले. या सर्व ऋषींच्या मनांत ईश्वराने प्रकाश केला.

आता हे व्याख्यान पुरे करण्यापूर्वी वेदाविषयी साधारण विचार केला पांहिजे.

कोणी म्हणतात की चंद्र सूर्यादिक भूतांची पूजा वेदांत उपदिष्ट आहे. परंतु हे म्हणणे संभवत नाही.

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चंद्रमाः।
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ता आपः स प्रजापति।।

(शुक्ल यजुर्वेद ३२/१) तथा-

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः ससुपर्णोगरुत्मान्।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति(अग्निं यमं मातरिश्वानमाहु)।। (ऋ.सं.१/१६४/४६)

अग्नी, इंद्र, वायू ही सर्व परमेश्वराची नावे आहेत. म्हणून अनेक देवताचा वाद मुळीच संभवत नाही.

प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि।
रुक्माभं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरुषं परम्।।
एतमग्निं वदन्त्येके मनुमन्ये प्रजापतिम्।

इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम्।।

(मनु.अध्याय १२/१२२/१२३)

परिच्छेद, प्रकार, विकार इत्यादी संबंधाने एका आत्म्याची निरनिराळी नावे संभवतात.

कोणी म्हणतात की, वेदांत बीभत्स कथा आहेत, 'माता च ते पिताच तें' या वचनावर महीधराने भाष्य करून फारच बीभत्स रस उत्पन्न केला आहे. 'गभें' याच्या ठिकाणी वर्ण विपर्यास करून 'भगे' हा शब्द काढला आहे. परंतु या संबंधाने शतपथ ब्राह्मण पाहा–

वृक्ष वृक्षो राज्यं भगश्रीः स्पसोराष्ट्रं श्रीर्वावृक्षस्याग्रम्।

(द्र.शत.१३/२/९/७)

अशी राष्ट्राचे ठिकाणी या वचनाची योजना केली असता, यात बीभत्सपणा उरत नाही.तसेच पुराणांत काश्यपीय प्रजेचे वर्णन आहे. मरीचीचा पुत्र **कश्यप** आहे. दक्षाच्या साठ कन्या! त्यातील तेरा कन्यांनी कश्यपाशीं लग्न केले, असे वर्णन आहे. या कथेस वेदांत मुळीच आधार नाही. कश्यप म्हणजे आद्यंताच्या विपर्यासाने **'पश्यकः'** परमात्म्याचे नांव आहे.

पश्यकः सर्वदृक् परमात्मा गृहीतः।।

याचप्रमाणे कोणी तरी कांही कथा करून **'ब्रह्मोवाच'** लावून असे पुराणाचे थोतांड रचले आहे. अशा प्रकारचा दुष्ट उद्योग आधुनिक सांप्रदायी लोकांनी फार केला आहे.

ब्रह्मोवाच –

टकाधर्म्मष्टकाकर्म टका हि परमं पदम्।
यस्य गृहे टका नास्ति हा टका टकटकायते।।

या सांप्रदायाचा फार बाजार जमला आहे. त्यायोगे ती दुकानदारी माजली आहे, ती हे सांप्रदायी लोक कशी मोडतील? यजमानाच्या तीन जन्माची हानी झाली, तर त्यांचे काय गेले? जेंव्हा सर्वत्र स्त्री व पुरुष सर्व वेदाचे अवलोकन करतील, तेंव्हा या सांप्रदायाची लटपट बंद होईल. मग कंठीच्या योगाने वैकुंठ मिळण्याचा सोपा मार्ग बंद पडेल. जर एकां कंठीने वैकुंठ मिळते, तर कंठ्याची पेंडकी घातल्याने संसारात सुख का मिळू नये? चंदन तिलकाने जर स्वर्ग मिळतो तर सर्व तोंडाला चंदन फासल्याने कांही सुख होऊ नये काय? चंदन, तिलक किंवा कंठी ही सर्व सांप्रदायी लोकांची द्रव्य संपादनाची साधने आहेत, ही खरी तीर्थे नव्हेत. खरी तीर्थे कोणती या विषयी वचन आहे–

अहिंसन् सर्वभूतान्यत्र तीर्थेभ्यः।

(छान्दोग्य उपनिषद् ८/१५/१)

सतीर्थ्यः सब्रह्मचारी विद्याव्रतस्नातः।।

(अष्टा.उदा.६/३/८६-८५) इत्यादी

ब्रह्मचारी पुरुष विद्यास्नात, व्रतस्नात आणि विद्याव्रतस्नात होत असे. यावरून वेदविद्या हेच मुख्य 'तीर्थ' होय. ***

त्रिवार जय-जयकार श्रीरामा...!

- (स्व.) माधवराव देशपांडे

दरवर्षी साजरी होणारी चैत्र शुक्ला नवमी ही तिथी रामनवमी म्हणून सर्वत्र सर्वश्रुत आहे. मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामाचा जन्म देखील याच चैत्र महिन्यातील शुक्ल नवमीचा...! श्रीरामचरित्राने सम्पूर्ण जगाला प्रभावित केले आहे. तसेच पथभ्रष्ट झालेल्यांना सत्प्रदर्शनाचे कार्य केले आहे. जगात अनेक महापुरुष होऊन गेले, परंतु घराघरात व प्रत्येकाच्या मना-मनांत रामचरित्राने घर केले आहे. दोन व्यक्ती एकमेकांना भेटल्या की 'राम-राम' म्हणतात. आजही ही प्रथा आमच्या खेडेगावात प्रचलित आहे. ब्राह्ममुहूर्ताला 'राम प्रहर' असे म्हणतात. असे हे 'श्रीराम' कितीतरी वर्षांपासून आमचे एक आदर्श मॉडेल बनले आहे.

श्रीरामाचे जीवन हे सर्व प्रकारच्या मर्यादांमध्ये राहुन व्यतीत झाले आहे . ते उत्तम आदर्शांच्या मार्गावरून चालत राहिले. एखाद्या राज्याला सुराज्याचे उदाहरण द्यायचे तर 'राम-राज्य' असे म्हटले जाते. निष्काम कर्म कसे करावे? तर ते रामांसारखे ! 'सुख-दुःखे समं कृत्वा..!' सर्व प्रकारच्या द्वंद्वांमध्ये समतोल राहणे म्हणजे काय तर रामासारखे जगणे. महर्षी वाल्मिकी म्हणतात - 'राज्याभिषेक होणार असे ठरल्यावर आणि लगेच वनवासाचा आदेश प्राप्त झाल्यावर सुद्धा श्रीरामाच्या चेहऱ्यावरील हावभावामध्ये किंचितही फरक दिसून आला नाही.' दुष्टांचा संहार, पतितांचा उद्धार, महिला सन्मान, आदरयुक्त आचरण, अजेय योद्धा, एकवाणी, एकवचनी, एकपत्नी अशा अनेक विशेषणांनी युक्त आदर्श श्रीराम! आयुष्यभर त्यांनी कोणाच्याही राज्याची कामना केली नाही. बालीचे राज्य त्याचा अनुज सुग्रीवाला, तर सुवर्णमय असलेल्या लंकेचे राज्य त्याचाच भाऊ बिभीषणाला अर्पण केले. मातृमोदवर्धक, पितृनिर्देशपालक, एक पत्नीवृत्ती, प्राणप्रियभार्यासखा, लोक संग्राहक, प्रजापालक नरेश, परोपकारी, संसार मर्यादा व्यवस्थापक, पुरुषोत्तम, सूर्यवंशप्रभाकर, जानकीजीवन, सन्मित्र अशा किती तरी विशेषणांनी प्रभू रामचंद्रांचे जीवन नटले आहे.

अनेक चित्रपटानी, प्रसिद्ध दूरदर्शन मालिकांनी श्रीरामाचे चरित्र जनतेच्या घराघरात नेऊन पोहोचवले. त्यामुळे रामायणातील घटनाप्रसंग सर्वश्रुत झाले आहेत. एका चक्रवर्ती राज घराण्यात जन्म घेऊन युवराज पदी आरूढ होऊन सुद्धा, राज घराण्याचा त्याग करुन, वल्कले धारण करुन व केवळ फलाहार ग्रहण करत

१४ वर्षाचा वनवास आनंदाने स्वीकारणे हे काही सामान्याचे काम नव्हे? तर यासाठी पुरुषोत्तमच व्हावे लागते. एवढेच नव्हे तर नुकताच विवाह करुन आलेली, जनकासमान एका राजर्षीची लाडकी सुकन्या सीता ही सुद्धा तितक्याच आनंदाने आपले पतिदेव श्रीरामांसोबत वनवास स्वीकारते. तसेच सतत अगदी सावलीप्रमाणे सोबत राहून आपले ज्येष्ठ बंधू श्रीराम व मातृसमान वहिनी सीता यांचे संरक्षण करणारा उत्तम योद्धा प्रिय लक्ष्मण हा सुद्धा तितकाच महान आहे. ज्येष्ठ बंधू राम वनवासाला निघतात, लक्ष्मण देखील त्यांच्यासोबत येण्याचा क्षणात ठामपणे निर्णय घेतो व १४ वर्षे वनवास पत्करतो. हे सगळे अलौकिकच आहे. म्हणून रामायण साऱ्या जगाला भावणारे प्रेरक काव्य ! आज सुद्धा म्हणजे जवळपास ९ लक्ष वर्षा नंतरही सर्व विरोधी आक्रमणांचा सामना करूनही जगातील अनेक ठिकाणी रामायण व श्रीराम कथा प्रचलित आहे.

रामायणाला ९ लाख वर्षे झाली असे आपण म्हणतो. याला आधार काय ? वायु पुराणात रामायण काळ २४ व्या युगात त्रेतायुगाच्या शेवटी असल्याचा उल्लेख आहे. आज २८ वे युग चालू आहे. हे २८ युग जरी सोडले व फक्त त्रेतायुगाच्या शेवटून काल गणना केली, तर हा काळ ९ लाख वर्षा पेक्षा जास्त होतो. द्वापर युगाचे ८,६४,००० वर्षे व कलियुगाचे ५,१०० वर्षे मिळविले तर ८,६९,१०० वर्षे होतात.

श्री रामाचा राज्याभिषेक चैत्र महिन्यात करावयाचे ठरलें होते. पण त्यांना १४ वर्षे वनवासात जावे लागले. १४ वे वर्ष संपता- संपता रावणाचा वध (फाल्गुन) अमावस्येला झाला होता. व श्रीरामाला भरताच्या भेटीसाठी एक दिवस ही वाया न घालवता भेटणे आवश्यक होते. यासाठीच श्रीराम अयोध्येला पुष्पक विमानातून येतात. म्हणून रामायणानुसार रावण वध चैत्र महिन्यात झालेला दिसून येतो. पण आपली रुढीनुसार काय समजूत आहे ? विजया दशमीला रावण वधाचा कार्यक्रम आयोजित करणे कितपत योग्य आहे?

वनवासातील १४ वर्षाच्या कालखंडात श्रीरामाला अनेक राक्षसांनी विरोध केला, आक्रमण केले. वध करता आला नाही ,म्हणून रावणासारख्या दुष्ट व्यक्तीने त्यांच्या पत्नीचेच कपटाने हरण केले. श्रीरामानी या सर्वांवर मात करुन या आततायी राक्षसांचा वध केला व तिथेही सुराज्य स्थापन केले. विशेष म्हणजे यासाठी त्यानी स्वतःचे सैन्य किंवा राजा जनकाचे, स्वतःच्या श्वसूराचे सैन्य घेतले नाही किंवा मदतही मागितली नाही. स्थानिक लोकांच्या म्हणजेच वनात राहणाऱ्या (वन+नर =वानर) मानव विशेष शूरसैनिकांच्या (सध्याचे वानर नव्हेत !)

साहाय्यानेच युद्ध केले व दुष्टांचा संहार केला.

श्रीराम जोपर्यंत अयोध्येत होते, तोपर्यंत लोकप्रिय युवराज होते. १४ वर्षांचा वनवास पूर्ण करून, राक्षसांचा संहार करून आले, तेव्हा ते मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम म्हणून ओळखले जाऊ लागले. अशा पुरुषोत्तमाचे आपण सर्वजण वंशज आहोत. हे आमचे केवळ भाग्यच नाही, तर सद्भाग्य आहे. निसर्गाचे वरदान प्राप्त असलेली, सहा ऋतुप्राप्त पुण्य भारतभूमी ! जेथे पुरुषोत्तम श्रीराम व योगेश्वर श्रीकृष्ण यांनी जन्म घेतला व ही भूमी पावन झाली, नऊ लाख वर्षांनंतरही रामायण हे पहिले आर्ष महाकाव्य, तर पाच हजार वर्षांनंतर महाभारत हे दुसरे मौलिक महाकाव्य त्यांच्या चरित्र नायकांमुळे अजरामर ठरले. त्यांच्या एकेका गुणांचे अनुकरण करून प्रत्येकाने आपापले जीवन सुधारले पाहिजे. प्रभू श्रीरामांची मातृभक्ती, पितृभक्ती, एकवचनी, मर्यादित जीवन, आततायी राक्षसाचा नायनाट करणे इत्यादी गुणाचे अनुकरण केले पाहिजे. रामांनी सोन्याच्या लंकेवर विजय मिळविला, तरी 'मा गृधः कस्य स्विद्धनम्!' या वैदिक वचनाप्रमाणे अर्थातच हे धन कोणाचे आहे? म्हणजेच आपले नाही ! ते 'क' सुखविशेष परमेश्वराचे आहे. याचे प्रत्यक्ष आचरण करून समाजाला नवदिशा दिली. ही परंपरा व संस्कृती आपण सर्वजण मिळून चिरंतन टिकवून ठेवू या !! सद्गुणांचे सागर व धर्माचे साक्षात मूर्तिमंत प्रतीक असलेल्या प्रभू श्रीरामांना त्रिवार वंदन व विनम्र अभिवादन! त्यांच्या पवित्र जीवन व कार्याचे अनुकरण करून आपण आपले जीवन मंगलमय बनवू या!

(दिवंगत लेखक श्री देशपांडे यांनी हा लेख आपल्या मृत्यूपूर्वी ३० मार्च २०२३ रोजी लिहिला होता.)

(प्रेषिका-श्रीमती नलिनी माधव देशपांडे)

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभा

मानवता संस्कार व आर्यवीर दल शिबिरे

सभेच्या वतीने मुले व मुलींच्या संस्कार संवर्धनासाठी प्रांतीय सभेतर्फे खालीलप्रमाणे शिबिरांचे आयोजन करण्यात आले आहे.

दि.२१ ते २७ एप्रिल २०२४ – आश्रमशाळा, वांजेवाडी, बुधोडा(मुलांसाठी)
दि.२८ एप्रिल ते ११ मे २०२४– सिद्धेश्वर मंदिर परिसर, लातूर(मुलांसाठी)
दि.८ ते १४ मे २०२४ – शारदासदन आश्रमशाळा, नांदगांव(मुलींसाठी)
दि.१२ ते १९ मे २०२४ – छ.शाहू सैनिकी विद्यालय, उदगीर(मुलींसाठी)
यासोबतच सोलापूर व आळंद येथेही शिबिरे होणार आहेत.

तरी पालकांनी आपल्या मुला-मुलींना वरील संस्कार शिबिरात पाठवावे.

वार्ताविशेष

धावण्याच्या शर्यतीत गुरुकुलचे ब्रह्मचारी चमकले

शासनाच्या वतीने नुकत्याच तालुका व जिल्हास्तरीय धावण्याच्या स्पर्धा घेण्यात आल्या. यात श्रद्धानंद गुरुकुल परळीच्या विद्यार्थ्यांनी उत्कृष्ट यश संपादित केले. पूर्णा येथील स्पर्धेत काशिनाथ बळीराम आर्य(इ.दहावी) सर्वद्वितीय आलेल्या विद्यार्थ्याने मुंबई येथील राज्यस्तरीय धावण्याच्या स्पर्धेत कामगिरी बजावली. या यशाबद्दल महाराष्ट्र सभेचे उपप्रधान श्री प्रमोदकुमारजी तिवारी यांनी पाच हजार रुपये प्रदान करून त्याचा सत्कार केला.

तसेच तालुकास्तरीय धावण्याच्या स्पर्धेत ब्र.आदित्य रंगनाथ घाडगे (३कि.मी.), ब्र. विश्वनाथ भागवत मोरे (दीड कि.मी.) व ब्र. प्रियांशू आर्य (४००मी.)हे तीन विद्यार्थी प्रथम आले, असून ब्र .राचय्या शांतय्या स्वामी हा ८०० मीटर धावण्याच्या स्पर्धेत द्वितीय आला आहे. या सर्व विद्यार्थ्यांचे अभिनंदन आर्य समाज परळीचे प्रधान, मंत्री, इतर पदाधिकारी, तसेच गुरुकुलचे आचार्य श्री सत्येन्द्रजी, पू. सोममुनीजी व इतरांनी केले आहे.

सोलापुरात प्रधानपदी बिराजदार तर मंत्रीपदी कट्टे

सोलापुर आर्य समाजाची सर्वसाधारण सभा पं.राजवीर शास्त्री यांच्या प्रमुख मार्गदर्शनाखाली संपन्न झाली. यात आर्य समाजाच्या प्रधानपदी श्री शंकरराव बिराजदार तर मंत्रीपदी श्री रेवणसिद्ध कट्टे यांची एकमताने निवड केली गेली. कार्यकारिणी खालीलप्रमाणे

प्रधान - शंकरराव बिराजदार

उपप्रधान - जनार्धन यन्नम

मंत्री - रेवणसिद्ध कट्टे

उपमंत्री - रवी यन्नम

कोषाध्यक्ष - देविदास उकिरडे

पुस्तकाध्यक्ष- वेदसुमन भोसले

वेदप्रचार अधिष्ठाता - प्रदीप आर्य, सत्यव्रत आर्य व केदार पुजारी

आर्य वीर दल अधिष्ठाता-शरद होमकर, महेश बुधराम

खजिनदार - स्वामी मेधानंदजी

संरक्षक - सुरेश बुरबुरे, राजेंद्र खराडे, नंदकिशोर गांगजी

अंतरंग सदस्य- दत्तात्रय जवळकर, विजय कोरेमोल, नरसिंग बांगड, राकेश उदगीरी, नेहा होमकर, नवनीता बुधाराम, कविता कट्टे

विशेष - लातूर येथील आर्य समाजाचा वार्षिकोत्सव उत्साहात पार पडला. यात अंतिम दिनी परळी गुरुकुलाच्या तीन मुनीजनांचा संन्यास दीक्षा सोहळा अविस्मरणीय ठरला. कार्यक्रमाचा विस्तृत वृत्तांत व विविध बातम्या पुढील अंकात..... - संपादक

शोक वार्ता

सौ. विद्यावती राजपूत यांचे निधन

सोलापुर येथील आर्य समाजाच्या सदस्या सौ. विद्यावती किशनसिंह राजपूत (आर्या) यांचे दि. २६ फेब्रुवारी २०२४ रोजी सकाळी दुःखद निधन झाले. मृत्युसमयी त्या ७५ वर्षे वयाच्या होत्या. गेल्या दोन वर्षांपासून त्या अर्धांगवायू आजाराने ग्रस्त होत्या. त्यांच्या पश्चात् पति, ३ मुले, सुना व नातवंडे असा परिवार आहे.

दिवंगत विद्यावती या बार्शी-पानगाव भागातील क्रांतिकारी आर्यधर्मी वेदप्रचारक पं. मनसारामजींच्या शिष्या होत्या. वैदिक ग्रंथाच्या अभ्यासक व सिद्धांतनिष्ठ आर्य कार्यकर्त्या होत्या. त्यांच्या पार्थिवावर सायंकाळी पं. राजवीरजी शास्त्री यांच्या पौरोहित्याखाली पूर्ण वैदिक पद्धतीने अंत्यसंस्कार करण्यात आले. यावेळी पूज्य श्री सोममुनिजी यांच्यासह आर्य कार्यकर्ते उपस्थित होते.

सुशीला पाखरसांगवे यांचे देहावसान

निलंगा येथील आर्य परिवाराच्या सदस्या सुश्री सुशीला नामदेवराव पाखरसांगवे यांचे दि. ११ फेब्रुवारी २०२४ रोजी दुपारी २ वा. दुःखद निधन झाले. मृत्युसमयी त्या ७० वर्षांच्या होत्या. मागील अडीच वर्षांपासून त्या कर्करोगाने आजारी होत्या. ज्येष्ठ आर्य कार्यकर्ते श्री नामदेवरावजी पाखरसांगवे यांच्या ज्येष्ठ कन्या असलेल्या सुशीलादेवी या अविवाहित होत्या. त्यांच्या पार्थिवावर निलंगा येथील सार्वजनिक स्मशानभूमीत वैदिक पद्धतीने अंतिम संस्कार करण्यात आले. परळी गुरुकुलाचे आचार्य श्री सत्येंद्रजींनी हा अंत्यविधी पार पाडला. यावेळी आर्य कार्यकर्ते व परिजन उपस्थित होते.

दिवंगतांच्या शांती व सद्गतीसाठी प्रार्थना आणि भावपूर्ण श्रद्धांजली...!

।।ओ३म्।।

माता निर्माता भवति।

आर्य समाज, परली एवं लोहिया परिवार की ओर से

वन्दनीया माता श्रीमती कौशल्यादेवी रामपालजी लोहिया

के गौरवशाली ९१ वर्षपूर्ति के उपलक्ष्य में

यजुर्वेद पारायण यज्ञ एवं

मातृवन्दना समारोह

दि.२४,२५ व २६ मई २०२४(शुक्र., शनि., रवि.)

- सस्नेह निमंत्रण -

आप सभी को विदित कराते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि, आर्य समाज की आधारशीला, गुरुकुल आश्रम की सम्पोषिका वंदनीया **माता श्रीमती कौशल्यादेवी रामपालजी लोहिया** के गौरवशाली ९१ वे वर्षपूर्ति के उपलक्ष्य में **'यजुर्वेद पारायण व आयुष्कामेष्टि यज्ञ एवं मातृवन्दना समारोह'** का आयोजन किया गया है। आमंत्रित विद्वान व भजनोपदेशिका -

- ओजस्वी वैदिक वक्ता -

मा.डॉ.महावीरजी आचार्य

प्रतिकुलपति, पतंजलि वि.वि., हरिद्वार

- मधुर भजन संगीत -

मा.श्रीमती अमृता शास्त्री

प्रसिद्ध भजन गायिका,दिल्ली

-* दि.२४ व २५ मई २०२४ *-

प्रातः ८ से ९.३० –यजुर्वेदपारायण यज्ञ

प्रातः १० से १२ –भजन संगीत एवं प्रवचन

सायं. ४ से ७ – यजुर्वेदपारायण यज्ञ

रात्री ८ से १०–भजन संगीत एवं प्रवचन

-* मुख्य समारोह *-

रविवार २६ मई २०२४

प्रातः ८ से ९.३० –आयुष्कामेष्टि यज्ञ

प्रातः १० से ११ – ग्रन्थ तुला एवं गुणगौरव

११ से १ –मातृवन्दना गौरव समारोह

*** आशीर्वाद - पू.स्वामी श्रद्धानन्दजी, डॉ.ब्रह्ममुनिजी, स्वामी सोममुनिजी, स्वामी विधानंदजी, ब्रह्मानंदजी, साध्वी आनंदमयी, यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य सत्येन्द्रजी**

अतः आप सभी अत्यधिक संख्या में पधारें ! बाहर से पधारनेवालों की भोजन व निवास व्यवस्था की गयी है !

REG.No.MAHBIL/2007/7493*
*Postal No.L/108/RNP/Beed/2021-2023

सेवा में,
श्री. ________________________

प्रेषक -
मन्त्री, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा,
आर्य समाज, परली-वैजनाथ.
पिन ४३१ ५१५ जि.बीड (महाराष्ट्र)

यह मासिक पत्र सम्पादक व प्रकाशक श्री मन्त्री, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा वैदिक प्रिंटर्स, परली वैजनाथ इस स्थलपर मुद्रित कर महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा के संपर्क कार्यालय आर्य समाज, परली वैजनाथ ४३१५१५ (महाराष्ट्र) इस स्थान से प्रकाशित किया ।

मातृ देवो भव !

भावभीनी श्रद्धाञ्जलि !

॥ओ३म् ॥

महर्षि दयानन्द सरस्वती के परम अनुयायी, वैदिक सिद्धान्तों के अध्येता
दानशूर आर्य कार्यकर्त्ता श्री समाधान लक्ष्मीकांतजी पाटिल
व सौ. कविता समाधान पाटिल
मु. पो. सावखेडा (खुर्द) ता. जि. जलगांव एवं पाटिल परिवार
की ओर से अपनी पूजनीया दादीमाँ
स्व. श्रीमती गुंढरबाई किशनरावजी पाटिल
इनकी पावन स्मृति में
वैदिक गर्जना मासिक का रंगीन मुखपृष्ठ भेंट

200वीं सदैव सत्य
महर्षि दयानन्द सरस्वती | जयन्ती 1824-2024

वेदो की ओर लौटो !

।। ओ३म् ।।

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

वेद प्रतिपादित मानवीय मूल्यों को जन-जन तक
पहुँचाने हेतु कार्यतत्पर सशक्त एवं समर्थ प्रान्तीय आर्य संगठन
महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा का

मासिक मुखपत्र

वैदिक गर्जना

वर्ष २४ अंक-४,५ अप्रैल/मई, २०२४

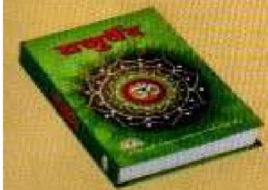
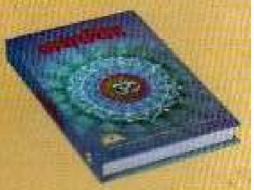

१५० वर्ष पूर्व आर्य समाज की स्थापना
करनेवाले समग्र क्रान्ति के अग्रदूत

महर्षि दयानन्द सरस्वती